दैनिक जागरण
समय का महत्व समझने से ही जीवन सार्थक बनता है

पाबंदियों पर सही रुख

सुप्रीम कोर्ट ने यह बिल्कुल सही कहा कि जम्मू-कश्मीर में सुरक्षा को लेकर लगाए गए प्रतिबंधों को हटाने के लिए केंद्र सरकार को वक्त मिलना चाहिए, क्योंकि इस राज्य के हालात संवेदनशील हैं। कोर्ट की इस टिप्पणी और याचिकाकर्ता को लगाई गई फटकार से उन लोगों को जवाब मिल जाना चाहिए जो अनुच्छेद 370 की समाप्ति के बाद हालात नियंत्रण में रखने के लिए लगाई गईं तमाम पाबंदियों को गलत ठहरा रहे हैं। यदि कोर्ट को यह कहना पड़ा कि याचिकाकर्ता को जमीनी हकीकत की जानकारी नहीं है तो फिर यह अपने आप साफ है कि प्रतिबंध हटाए जाने की मांग कितनी अतार्किक है। बेहतर हो कि इन पाबंदियों से असुविधा महसूस कर रहे लोग यह समझें कि ये खुद उनकी और राज्य के अन्य लोगों की सुरक्षा के लिए हैं। मौजूदा हालात में सुरक्षा संबंधी प्रतिबंधों को एक झटके में वापस नहीं लिया जा सकता। कश्मीर के मामले में तो यह और अधिक आवश्यक है कि सुरक्षा को लेकर अतिरिक्त सतर्कता बरती जाए। लंबे समय से आतंकवाद से प्रभावित जम्मू-कश्मीर में ऐसे तत्वों को कोई मौका नहीं दिया जा सकता जो भारत को हजार घाव देने के मंसूबे पाले हुए हैं और किसी भी समय कोई बड़ी आतंकी घटना अंजाम देने की कोशिश कर सकते हैं। अनुच्छेद 370 पर सरकार के ऐतिहासिक फैसले के संदर्भ में सुरक्षा को चाक-चौबंद रखने के लिए जो कदम उठाए गए हैं उनका उद्देश्य ऐसे ही तत्वों के मंसूबों को नाकाम करना है।

केंद्र सरकार का फैसला जम्मू-कश्मीर को एक नए युग में ले जाने के लिए कड़वी औषधि की तरह है। इसका असर होने में वक्त भी लगेगा और कुछ तकलीफें भी होंगी। इन तकलीफों को सहने के लिए हर किसी को तैयार रहना चाहिए। अब जब राज्य प्रशासन की ओर से यह बताया गया है कि हालात की समीक्षा करते हुए पाबंदियों में चरणबद्ध तरीके से ढील दी जा रही है तब उचित यही है कि सरकार को अपना काम करने दिया जाए। वैसे भी यह कोई पहला अवसर नहीं है जब जम्मू-कश्मीर में सुरक्षा को लेकर आम जनता के आवागमन और इंटरनेट जैसी सुविधाओं पर पाबंदियां लगाई गई हों। बेहतर हो कि जम्मू-कश्मीर की जनता सेना प्रमुख जनरल बिपिन रावत के इस संकल्प पर गौर करे जिसमें उन्होंने कहा है कि सेना स्थानीय लोगों के साथ वैसे ही मिलकर रहेगी जैसे वह 30-40 साल पहले रहती थी। रावत के इस कथन का संदेश साफ है कि आतंकवाद के कारण सुरक्षा चुनौतियों को देखते हुए सेना और आम जनता के बीच यदि कोई दूरी बन भी गई थी तो वह अब समाप्त होने वाली है।

बदलाव पर विचार

34 वर्षों तक लगातार शासन करने वाली माकपा आज बंगाल में अस्तित्व बचाने की लड़ाई लड़ रही है। वाममोर्चा अन्य घटक दलों को साथ लेकर लड़ने के बावजूद इस स्थिति में पहुंच चुकी है कि अपने दम पर चुनाव लड़ना भी मुश्किल है। इस विकट परिस्थिति में पश्चिम बंगाल में अपने सबसे खराब प्रदर्शन के दो महीने बाद माकपा राज्य के लोगों तक खास संदेश देने के लिए अपने संगठन में बड़े बदलाव की तैयारी कर रही है। पार्टी के सभी स्तरों पर अपने पुराने दिग्गज नेताओं की जगह पर नए चेहरे को मौका देने पर विचार कर रही है। 1977 से लगातार 34 वर्षों तक बंगाल पर शासन करने वाली माकपा के नेतृत्व वाले वाममोर्चा को 2019 के चुनाव में एक भी सीट हाथ नहीं लगी। राज्य की 42 लोकसभा सीटों में से 40 पर तो पार्टी उम्मीदवारों की जमानत जब्त हो गई। वाम दल को सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस और बंगाल की राजनीति में उभरी भाजपा से कड़ी चुनौतियां मिल रही है। मई में आए चुनाव परिणाम के बाद से वामदल ने राज्य समिति की दो बैठकें आयोजित की हैं। चुनाव नतीजे में साफ तौर पर दिख गया कि राज्य में पार्टी की पकड़ कितनी कमजोर हो गई है। बैठकों में पार्टी इस निष्कर्ष पर पहुंची कि संगठनात्मक परिवर्तन न केवल जमीनी स्तर और मध्य स्तरों पर, बल्कि मतदाताओं को 'एक संदेश भेजने' के लिए शीर्ष स्तर पर भी होना चाहिए। वाम दल सोशल मीडिया के जरिए भी युवाओं तक पहुंचने की कोशिश कर रहा है। माकपा पोलित ब्यूरो के सदस्य हन्नान मोल्लाह का कहना है, 'पार्टी एक असाधारण स्थिति से गुजर रही है और इस स्थिति में असाधारण उपायों की जरूरत है। इससे पहले हमारे सामने केवल तृणमूल थी। अब हम तृणमूल और भाजपा की दोहरी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।' परंतु, यहां सबसे बड़ा सवाल माकपा के लिए यह कि आखिर युवा नेता लाएंगे कहां से? माकपा की युवा एवं छात्र शाखा डीवाईएफआइ हो या फिर एसएफआइ आज दयनीय स्थिति में है। आज के युवाओं को माकपा की घीसीपीटी राजनीति में दिलचस्पी नहीं है। क्योंकि वामपंथी दलों ने कन्हैया जैसे कुछ युवाओं को चुनावी मैदान में उतारा, लेकिन उनकी जो सोच व विचारधारा है उसे लोगों ने एक सिरे से खारिज कर दिया है। ऐसे में माकपा के लिए युवाओं को पार्टी से जोड़ना आसान नहीं होगा। क्योंकि पिछले एक दशक से बंगाल ही नहीं पूरे देश की राजनीति काफी बदल चुकी है।

संवैधानिक कसौटी पर कितना खरा दांव

अश्विनी कुमार

अनुच्छेद 370 को खत्म करने के सरकार के निर्णय पर लोकप्रिय राष्ट्रीय धारणा नि:संदेह इसके पक्ष में है, लेकिन इस प्रक्रिया की संवैधानिक वैधानिकता को लेकर सवाल भी उठ रहे हैं

मोदी-शाह की जोड़ी ने एक बड़ा दांव खेला है। मोदी सरकार ने जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 समाप्त करते हुए राज्य को केंद्रशासित प्रदेशों में बांट दिया है। सरकार ने कश्मीरी लोगों के लिए शांतिपूर्ण एवं समृद्ध भविष्य का वादा करते हुए यह कदम उठाया। अब यह इतिहास ही तय करेगा कि सरकार ने जो हिम्मत दिखाई है, क्या वह वक्त से पहले उठाया गया कदम मानी जाएगी या फिर उसे इस तरह याद किया जाएगा कि ऐसे फैसले का समय आ गया था। चूंकि यह निर्णय देश को जोड़ने वाली कड़ी के रूप में देखा गया तो निःसंदेह लोकप्रिय राष्ट्रीय धारणा इसके पक्ष में है, लेकिन इस प्रक्रिया की संवैधानिक वैधानिकता को लेकर सवाल उठ रहे हैं। अब इसका फैसला शीर्ष अदालत को करना है जो कदम मुख्य रूप से राजनीतिक लिहाज से उठाया गया प्रतीत होता है।

संवैधानिक दृष्टि से देखें तो याचिकाकर्ता सहित इसके आलोचकों को लगता है कि सरकार का यह कदम देश के संघीय ढांचे पर प्रहार है। वे महसूस करते हैं कि यह विलय की संधि में कश्मीरियों के साथ किए गए वादे का शर्मनाक तरीके से किया उल्लंघन है। वे इस कदम को 'संवैधानिक विरूपता' की संज्ञा भी दे रहे हैं। बहस हो रही है कि अनुच्छेद 370 की धारा तीन को संवैधानिक गारंटी के मूल को खत्म करने के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। लिहाजा ऐसी कोई भी व्याख्या कानूनी तौर पर असंभव है। आलोचकों की दलील है कि चूंकि संविधान के अनुसार भारत राज्यों का एक संघ है तो इस स्थिति में वह किसी केंद्रशासित प्रदेश को अवश्य पूर्ण राज्य का दर्जा दे सकता है, लेकिन एक संप्रभु शक्ति के रूप में उसने कभी किसी प्रदेश के पूर्ण राज्य का दर्जा खत्म नहीं किया। केंद्र सरकार के एकतरफा निर्णय के खिलाफ मुख्य कानूनी आपत्ति यही है कि इसमें राज्य के चुने हुए जनप्रतिनिधियों की सहमति नहीं ली गई है जो कि मूल संवैधानिक व्यवस्था के दृष्टिकोण से अनिवार्य है। नवगठित केंद्रशासित प्रदेश में विधानसभा के दायरे को सीमित करना 'एक बड़े तबके को पूर्ण लोकतांत्रिक भागीदारी के अधिकार से वंचित करने' के रूप में देखा जा रहा है। यहां बहुसंख्यक भावनाएं भुनाने के लिए संवैधानिक सिद्धांतों को ताक पर रख दिया गया। यह कार्यकारी शक्ति के अतिक्रमण के विरुद्ध पूरक संवैधानिक संरक्षण की अवहेलना के क्रम में अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है।

वहीं इसके पक्ष में भी उतनी ही मजबूती से तर्क दिए जा रहे हैं। इस पर संसदीय हस्तक्षेप में गृहमंत्री अमित शाह ने सामाजिक एवं आर्थिक न्याय, लैंगिक समानता का सिद्धांत और राज्य में शांति एवं तरक्की की उम्मीद का हवाला दिया। वहीं केंद्र द्वारा दिए गए अधिकारों से कश्मीरियों को भी अन्य नागरिकों की तरह विकास के पूरे लाभ मिलेंगे। इससे संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता का अधिकार सुनिश्चित होगा। यह दावा भी किया गया कि बीते सात दशकों से जम्मू-कश्मीर के लोगों को जो विशेष दर्जा और खास अधिकार मिले थे उनसे मकसद हासिल नहीं हुआ और ऐसे में कश्मीरियों के लिए समय आ गया है कि वे राज्य में शांति और स्थानीय लोकतंत्र को सशक्त बनाने के लिए एक नई राष्ट्रीय कड़ी से जुड़ें। इस दृष्टि से फैसले को मूल संवैधानिक मान्यताओं के अनुरूप पेश किया जा रहा है।

अवधेश राजपूत

सरकार की बुनियादी दलील है कि संविधान को किसी कालखंड के दायरे में समेटकर नहीं रखा जा सकता। राष्ट्र और लोकतंत्र समकालीन स्थितियों के संदर्भों में विकसित होते हैं। एक स्थिर समाज का विकास अपने अंतर्निहित प्रभावों से अवरुद्ध हो जाता है। ऐसे में आने वाली पीढ़ियों को इतिहास की बेड़ियों से मुक्त होकर अपने अनुभवों के आधार पर नए रास्ते तलाशने चाहिए। सरकार का दावा है कि अनुच्छेद 370 एक अस्थायी संवैधानिक प्रावधान है, जिसका उपयोग एवं प्रासंगिकता पर निर्णय करने का अधिकार सरकार के पास है कि वह किसी विशेष संदर्भ में इसका आकलन कर सकती है। केंद्र सरकार शायद इसमें अदालत के क्षेत्राधिकार को भी चुनौती देते हुए दलील दे कि एक चुनी हुई सरकार को भारत की एकता और कश्मीरी लोगों की प्रगति को ध्यान में रखकर एक नीति आधारित राजनीतिक निर्णय करने का अधिकार है। इस लिहाज से यह न्यायिक समीक्षा का विषय नहीं हो सकता और यह 'न्यायिक शासनीय मानदंडों' के दायरे में नहीं आता। अदालत को आगाह किया जाएगा कि वह किसी 'राजनीतिक झंझावात' में न पड़े। इस विषय पर संवैधानिक नीतिशास्त्र की भी दुहाई दी जाएगी और स्मरण कराया जाएगा कि संवैधानिक गारंटी स्थिर नहीं होती और यह समय के अनुसार बदलती रहती है। अपने निर्णय के समर्थन में सरकार आवश्यकता के सिद्धांत का हवाला भी दे सकती है कि अतीत में भी अनुच्छेद 370 को लेकर ऐसी प्रक्रियाएं अपनाई जा चुकी हैं।

इसमें न तो कोई बुद्धिमानी है और न ही यह संभव है कि इस मामले में अदालती रुख के आकलन का जोखिम लिया जाए। हालांकि राजनीतिक संदर्भों को देखते हुए यह कड़ी परीक्षा अवश्य होगी। मौजूदा राष्ट्रीय मिजाज को देखते हुए संविधान की व्याख्या में 'मूलवाद (ओरिजिनलिज्म) की ऐतिहासिक अस्वीकार्यता' बड़ी लुभावनी प्रतीत होती है। हालांकि सुप्रीम कोर्ट ने जो न्यायिक सक्रियता दिखाई है, उसमें मामले को नकारने की गुंजाइश नहीं है। जैसे समाज में बदलाव जीवन का नियम है, वैसे ही समाज में आ रहे बदलावों पर प्रतिक्रिया भी कानूनी जीवन का हिस्सा है। वास्तव में न्यायिक समीक्षा की विस्तृत शक्ति स्वयं ही इस सिद्धांत पर संचालित होती है कि किसी संविधान को नए प्रारूप में सार्थकता देनी होती है। वहीं सुप्रीम कोर्ट ने भी स्थिर न्यायिक व्याख्या द्वारा संविधान की भावना को धता बताने के खतरे को लेकर आगाह किया है।

फिर भी कानूनी चुनौतियों के परिणामों के लिहाज से स्पष्ट है कश्मीर को लेकर विरोधाभासी विमर्श की निर्णायक लड़ाई अदालती कक्षों या लुटियंस दिल्ली की बैठकों में और कश्मीर की सड़कों पर नहीं लड़ी जाएगी। कश्मीर में शांति और समृद्धि की लड़ाई में हार-जीत का फैसला इसी से तय होगा कि भारतीय लोग अपने दिल और दिमाग में क्या रखते हैं। कश्मीर की नियति राजनीतिक विमर्श में अपने यही अर्थ प्रस्तुत करती है कि देश केवल रोटी के सहारे ही जिंदा नहीं रहते। सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है कि वह कश्मीरी लोगों की पहचान और गरिमा का सम्मान करते हुए उनमें स्वैच्छिक देशभक्ति का जज्बा जगाने में सफल हो। उम्मीद है कि इस संदर्भ में प्रधानमंत्री के आश्वस्तकारी बयान से जुड़ी योजना जल्द ही मूर्त रूप लेगी। इससे ही भारत की 'सभ्य' देश वाली छवि मुखरित होगी, जो उसके मूल्यों से 'सॉफ्ट पावर' में परिलक्षित होती है।

(लेखक पूर्व केंद्रीय मंत्री हैं)
response@jagran.com

गांधीवाद की ओर लौटने की दरकार

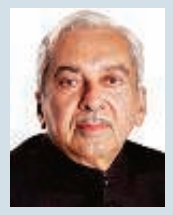

जगमोहन सिंह राजपूत

महात्मा गांधी के मूल्यों को भुलाने से ही अपरिग्रह की संस्कृति आज संग्रह की धारा बनकर क्षति पहुंचा रही है

एक दिन बाद हम आजादी की वर्षगांठ मनाएंगे। इस अवसर पर स्वत्रंतता दिलाने वाले सेनानियों का स्मरण भी स्वाभाविक रूप से किया जाएगा। यह भी एक संयोग है कि इस वर्ष दो अक्टूबर को आजादी के सबसे बड़े नायक माने जाने वाले महात्मा गांधी के जन्म के 150 वर्ष पूरे होंगे। इस उपलक्ष्य में अनेक संस्थाओं ने गांधी के समय के मूल्यों, स्वतंत्रता के बाद के भारत की संकल्पनाओं के साकार होने की स्थिति तथा देश में जनतंत्र के स्वरूप पर विचार-विमर्श आयोजित किए। स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया गया। 15 अगस्त, 2014 को लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गांधी जी के जन्म के 150 वर्ष पूरे होने पर देश की ओर से उन्हें स्वच्छ भारत की सौगात देने का संकल्प लिया था। पहले तो सुनकर लोगों को अचंभा हुआ, मगर धीरे-धीरे स्वच्छता के महत्व को समझा गया। बड़े उत्साह से शौचालयों के निर्माण का कार्य सारे देश में हुआ। आज 27 राज्य/केंद्र शासित प्रदेश खुले में शौच से मुक्त हैं और 98.6 प्रतिशत परिवारों को शौचालय उपलब्ध हैं। स्वच्छता महात्मा गांधी को अत्यंत प्रिय थी। वह इस सौगात से प्रसन्न अवश्य होते, लेकिन अभी इस पर बहुत कुछ करना शेष है।

नरेंद्र मोदी की कर्मठता और जीवन शैली का प्रभाव प्रशासन के अंतिम छोर तक तो पहुंचा है और उसके परिणामस्वरूप शौचालय केवल कागजों पर नहीं बने हैं, मगर उनके निर्माण में जो गुणवत्ता-स्तर अपेक्षित था, उसमें कमी रही होगी। अब लोग सरकारी धन के अपव्यय को देखकर शिकायत नहीं करते। उसे सामान्य मान चुके हैं। यह चिंता का विषय है। महात्मा गांधी के जीवनकाल में ही उनके आदर्श देश भर में पहुंच चुके थे। उस समय यदि ऐसे किसी कार्य में थोड़ा भी क्षरण होता तो लोग सशक्त विरोध करते। यदि वे जीवन मूल्य तिरोहित न हो गए होते तो संभवतः स्वच्छ भारत की संकल्पना इन वर्षों में सही स्वरूप ले चुकी होती, जिस पर समूचा विश्व आश्चर्य करता। स्वच्छता आवश्यक है, मगर और भी बहुत कुछ फिर से पाना है। आज भी देश में तमाम लोग राष्ट्र के कार्य में इस आशा के साथ जुटे हुए हैं कि यह देश महात्मा गांधी के मूल्यों से स्वयं को कभी अलग नहीं कर पाएगा। नरेंद्र मोदी की स्वच्छता-सोच उसी का एक उदाहरण है। महात्मा गांधी के विचारों को अपनाने वाले लोग भी हर क्षेत्र में कार्यरत हैं। इनकी संख्या कैसे बढ़े, उनका विश्वास कैसे बढ़े और इनकी ओर अधिकाधिक लोग कैसे आकर्षित हों, इस पर भी आज चर्चा होनी चाहिए।

भारतीय प्रशासनिक सेवा के नामचीन अधिकारी रहे महेश नीलकंठ बुच का प्रकाशित संकलन वर्तमान स्थिति तक पहुंचने के कारणों का एक अत्यंत सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही साथ उन संभावनाओं को भी चिन्हित करता है जो राष्ट्र-निर्माण के लिए आवश्यक मूल्यों को पुनः जागृत कर सकती हैं, जिनके आधार पर देश स्वतंत्र हो पाया था। अपनी कर्मठता, लगनशीलता तथा सिद्धांतपरकता के लिए सदा सराहे गए 'एमएन बुच' ने आठ साल पहले ही सेवानिवृत्ति ले ली थी, क्योंकि वह राजनीतिक दबाव में अपने नैतिक मूल्यों से हटने को तैयार नहीं थे! दिल्ली विकास प्राधिकरण के प्रमुख पद पर रहते हुए 1978 में उन्होंने पाया कि 92 प्रतिशत आवंटन विवेकाधीन/तरजीही कोटे में आते हैं। इसमें सामान्य व्यक्ति के लिए केवल आठ प्रतिशत बचता है। तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई से मिलकर वह इसमें संशोधन कराने में सफल हुए। जैसा अपेक्षित था, व्यवस्था में लोग नाखुश हुए। उन्हें इसका अंजाम भी भुगतना पड़ा! बुच के लेखों में कुछ ऐसे प्रकरणों की चर्चा है जो आज भी लोगों के अंतर्मन को झकझोर सकने की क्षमता रखते हैं। ये स्पष्ट करते हैं कि महात्मा गांधी के समय के मूल्य किस अनुपात में तिरोहित हो चुके हैं और इसके दुष्परिणाम सामान्य व्यक्ति पर कैसे पड़ रहे हैं।

केंद्र सरकार में मंत्री तथा असम के राज्यपाल रहे स्वतंत्रता सेनानी श्री प्रकाश महात्मा गांधी के सानिध्य में रहे, देश के हर बड़े नेता के साथ उन्होंने कार्य किया। सेवानिवृत्ति के बाद एक दिन उनकी पोती ने उन्हें उदास देखकर कारण पूछा। उन्हें बंबई से मद्रास जाना था, मगर रेल का टिकट उपलब्ध नहीं था। उनकी पोती ने उन्हें टिकट लाकर दिया! दादा जी के पूछने पर उसने बताया कि किसी एजेंट को पचास रुपये अलग से दिए थे, काम हो गया! दादा जी ने टिकट स्वीकार नहीं किया, उन्होंने कहा कि वह गांधी के देश में पैदा हुए हैं, वे ऐसे टिकट पर यात्रा कैसे कर सकते हैं? उनकी पोती नें कहा कि मैं भी गांधी के देश में ही पैदा हुई हूं! इस पर जो उत्तर उसे मिला वह किसी के भी सामने पूरा परिदृश्य खोल कर रख देता है: 'बेटी, मेरे गांधी थे मोहनदास करमचंद गांधी और तुम्हारी गांधी हैं इंदिरा गांधी!' महेश बुच ने 1967 के बाद आए परिवर्तन का बड़ा ही सटीक वर्णन अन्य कई प्रकरणों में भी किया है। मंत्री के स्तर पर मानवीय संवेदनाओं से युक्त कर्तव्यनिष्ठ आचरण की एक घटना अत्यंत मर्मस्पर्शी है। काका साहेब गाडगील पंडित नेहरू की सरकार में मंत्री थे। वह महात्मा गांधी, नेहरू, पटेल जैसे नेताओं के निकट सहयोगी रहे थे। एक बार बंबई दौरे पर उन्होंने सीपीडब्ल्यूडी के कुछ कार्यों का निरीक्षण किया। उस विभाग के मुख्य अधिकारी नें उन्हें अपने घर पर भोजन के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने अपने सचिव से कहा कि चांदी की थालियों में भोजन परोसा गया था। इस अधिकारी के आचरण और ईमानदारी की जांच की जाए! उनके सजग सहयोगी ने बताया कि वे थालियां तो एक अतिथि गृह से मंगाई गई थीं, और ऐसा उन पर मुद्रित था। काका साहेब को लगा कि उन्होंने गलत अनुमान के आधार पर उस अधिकारी के बारे में धारण बनाई। इस गलती के प्रायश्चित के लिए काका साहेब ने उसी समय उस अधिकारी के घर जाकर उनसे क्षमा मांगी।

आज राजनीति के पटल पर महत्वपूर्ण माने जाने वाले कुछ नामों की चर्चा अवश्य होती है कि कहां से चले थे, कहां तक पहुंच गए! जाहिर है महात्मा गांधी को भुलाने से ही अपरिग्रह की संस्कृति संग्रह की धारा बन गई है! साफ है कि महात्मा गांधी को भुलाकर पंक्ति के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति को उसके अधिकार नहीं मिल पाएंगे। भारत में गांधी जी के द्वारा अपनाए गए शाश्वत मूल्यों की पुनर्स्थापना ही विकल्प है।

(लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

मानव जीवन

मानव जीवन प्राप्त होना इस सृष्टि का सर्वोत्कृष्ट उपहार है। मानव जीवन प्राप्त होने का आशय है आनंद का द्वार खुलना। हमारे ऋषियों ने इस मानव जीवन को मोक्ष रूपी मंदिर का प्रवेश द्वार माना है। यही स्वर्णिम काल है जिसमें मनुष्य भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति भी कर सकता है। मनुष्य योनि आत्म कल्याण करने का सबसे उत्तम साधन है। पुण्य कर्म संपादित करके नूतन पथ तैयार करने का अवसर इसी मानव जीवन में उपलब्ध होता है। मनुष्य जीवन साधना, उपासना के माध्यम से आत्म तत्व का साक्षात्कार करने की स्वर्णिम वेला है। सद् ग्रंथों के उपदेशों तथा उच्च कोटि के साधकों के मार्गदर्शन में इस मानव जीवन में अनेक प्रकार की आध्यात्मिक उपलब्धियों को अर्जित किया जा सकता है। सूक्ष्म शरीर पर पड़े जन्म जन्मांतरों के संस्कारों तथा तामसिक वृत्तियों को आध्यात्मिक साधना के माध्यम से दूर करने का पावन अवसर इसी जीवन में प्राप्त होता है। इस दृश्य जगत में रहते हुए निःस्वार्थ भाव से कर्तव्य कर्म करते हुए जीवन को आनंदमय बनाना मनुष्य के हाथ में है।

यह जीवन दुखों से निवृत्ति के लिए प्राप्त हुआ है। इस जीवन में यदि मनुष्य दुखी, चिंताग्रस्त होकर अज्ञानी बनकर अपना समय व्यतीत कर देता है तो यह उसका दुर्भाग्य है। परमेश्वर ने मनुष्य को विवेक शक्ति रूपी आभूषण से अलंकृत करके इस संसार में भेजा है। मनुष्य को प्रतिपल आत्मनिरीक्षण करना चाहिए। आत्मनिरीक्षण मानव जीवन का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। इसे स्वयं की चिकित्सा कहा गया है। मन, वाणी, शरीर से कभी भी पाप कर्म न हो इसलिए सदैव सजग रहें। इस बहुमूल्य धरोहर को प्राप्त करके मनुष्य को अपने जीवन में उल्लास, आनंद एवं समृद्धि का संचार करना चाहिए। भौतिक संपत्ति के साथ-साथ आध्यात्मिक संपत्ति अर्थात पुण्य कर्मों का संचय भी अवश्य करना चाहिए। भौतिक धन से तो केवल इस संसार की यात्रा सुखद बनती है, परंतु आध्यात्मिक धन मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। यही इस मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है।

आचार्य दीप चंद भारद्वाज

कम हो रही है खेती योग्य जमीन

मंजूषा

दुनिया में 23 प्रतिशत खेती योग्य भूमि का क्षरण हो चुका है। वहीं भारत में 30 प्रतिशत भूमि अब कृषि योग्य नहीं रह गई है

हाल ही में संयुक्त राष्ट्र की जलवायु परिवर्तन संबंधी अंतर सरकारी समिति यानी आइपीसीसी ने जलवायु परिवर्तन और भूमि संबंधी अपनी रिपोर्ट जारी की है। इसमें कई चिंताजनक तथ्य उभरकर सामने आए हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि दुनियाभर में 23 प्रतिशत खेती करने योग्य भूमि का क्षरण हो चुका है। वहीं भारत में 30 प्रतिशत भूमि अब कृषि योग्य नहीं रह गई है। इतना ही नहीं, बल्कि यह प्रक्रिया लगातार जारी है। दरअसल जब किन्हीं प्राकृतिक कारणों या फिर इंसानी गतिविधियों की वजह से उस क्षेत्र विशेष की भूमि की उत्पादकता में कमी आ जाने को भू-क्षरण कहते हैं। ऐसी जमीन में खेती करना संभव नहीं होता। यह अपनी तरह की पहली ऐसी रिपोर्ट नहीं है जिसमें इस तरह की हकीकत बयां की गई है। इससे पहले इसरो यानी भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन भी बता चुका है कि भारत के कुल भू-क्षेत्र का करीब 30 प्रतिशत भाग उपजाऊ लायक नहीं रहा यानी इतना हिस्सा रेगिस्तान या मरुभूमि में तब्दील हो चुका है।

अब तक जिन इलाकों में भू-जल खत्म हो जाता है या फिर जहां पानी की मौजूदगी नहीं होती उन्हें मरु भूमि घोषित कर दिया जाता है। क्योंकि जल के अभाव में वहां किसी तरह की खेतीबारी नहीं हो पाती है। लेकिन हाल के दिनों में भू-क्षरण की एक बड़ी वजह शहरीकरण भी बन कर उभरी है। चूंकि शहरीकरण के चलते नए नए सड़कों, पुलों, उद्योग धंधों, आवासीय कॉलोनियों और रेलवे लाइनों का निर्माण हो रहा है जिसके कारण खेती योग्य जमीने तेजी से खत्म हो रही हैं। इसके अलावा तीव्र जलवायु परिवर्तन, वन क्षेत्र का लगातार कम होने और कीटनाशकों एवं उर्वरकों के उपयोग के चलते भी जमीन की उर्वरा शक्ति कम हुई है। भू-क्षरण के इन कारणों पर अभी दुनिया का बहुत ज्यादा ध्यान नहीं गया है। लिहाजा इस समस्या के निवारण पर ज्यादा चर्चा भी नहीं हो पा रही है।

यह समस्या इस वजह से भी विकराल होती प्रतीत हो रही है, क्योंकि इसके कारण विभिन्न उपभोग की वस्तुओं की पैदावार में गिरावट देखी जा रही है। साथ ही जो खाद्य पदार्थ पैदा हो रहे हैं उनमें पोषक तत्वों भी कम होते जा रहे हैं। जाहिर है इससे हमारी खाद्य सुरक्षा बुरी तरह प्रभावित हो सकती है। पैदावार में गिरावट की वजह से खाद्य पदार्थों की कीमतें भी बढ़ रही हैं। वर्ष 2050 तक खाद्य वस्तुओं की कीमतें 23 प्रतिशत तक बढ़ सकती हैं।

हालांकि आइपीसीसी ने इस गंभीर प्राकृतिक आपदा से निपटने के लिए कुछ उपाय सुझाए हैं। मसलन उसने जीवाश्म ईंधन से होने वाले कार्बन उत्सर्जन को रोकने के साथ-साथ खेती के तौर-तरीकों में बदलाव करने, शाकाहार को बढ़ावा देने और जमीन का सोच-समझकर इस्तेमाल करने का अहम सुझाव दिया है। जाहिर है यदि हमें समय रहते इस समस्या से निजात पाना है तो हमें अपनी विकास की दिशा बदलनी होगी, क्योंकि विकास की हमारी मौजूदा प्रक्रिया हमें विनाश की ओर ले जा रही है। इसमें प्रकृति को हमें अपना साथी बनाना होगा। इससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम होगा और जमीन की गुणवत्ता बरकरार रहेगी।

(लेखिका शिक्षिका हैं)

मेलबाक्स

बदले हालात में कश्मीर को संवारना जरूरी

कश्मीरियों से सच्चे संवाद की जरूरत शीर्षक से लिखे अपने लेख में शंकर शरण ने कश्मीर को विशेष दर्जा देने वाले अस्थायी अनुच्छेद-370 और 35-ए के खात्मे के बाद कश्मीरियों से जिस सार्थक संवाद की जरूरत पर बल दिया है, वह उचित है। वस्तुतः बदले हालात में अब केंद्र शासित जम्मू-कश्मीर और लद्दाख को संवारने की जिम्मेदारी भारत सरकार की है। इसके प्रति प्रधानमंत्री मोदी ने देश के नाम अपने संबोधन में कश्मीर को संवारने की जैसी प्रतिबद्धता जताई है, वह गौर करने लायक है। ऐसे में कश्मीरी मुसलमानों को भी यह समझना होगा कि कश्मीर में उनके बहुसंख्यक होने के बाद भी अल्पसंख्यक कश्मीरी पंडितों और सिखों का भी कश्मीर पर बराबर का हक है। देश की उस पंथनिरपेक्ष पहचान को शेष भारत की तरह कश्मीर में भी बनाए रखने की जरूरत है, जिसे कश्मीर की झूठी आजादी की ओट में पाक पोषित आतंकवादी और अलगाववादी पिछले तीन दशकों से छिन्न-भिन्न करने की कोशिश में लगे हुए थे। आतंक पीड़ित अल्पसंख्यक कश्मीरी पंडितों और सिखों का सामूहिक नरसंहार इनकी इसी कोशिश का एक हिस्सा था, जिसे मोदी शासन में नाकाम कर दिया गया। मोदी सरकार ने ही कश्मीरियों सहित अन्य देशवासियों को इस बात की अनुभूति कराई कि कश्मीर संप्रभु भारत राष्ट्र का एक हिस्सा है जो अब संवैधानिक रूप से केंद्र शासित है। इस दृष्टि से बदलते परिवेश में 1990 से पहले की महकती कश्मीरियत को पुनर्जीवित करने की जिम्मेदारी अब वहां के उन स्थानीय नागरिकों की भी है जो अभी तक अलगाववादियों और आतंकवादियों के बहकावे में आकर अपनी रक्षक भारतीय सेना पर ही पत्थर बरसाते रहे हैं। निःसंदेह यह काम आपसी संवाद से ही संभव है, जिसकी पहल भारतीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल सहित खुद प्रधानमंत्री मोदी कर चुके हैं। आतंकवाद की कोख मानी जाने वाली कश्मीर घाटी की वह युवा शक्ति जो अभी तक शेष भारत से कटी रही, उसे अपनी दक्षता से बदलते कश्मीर को संवारना होगा। इसके लिए भारत और उसकी भारतीयता से कटने की नहीं अपितु जुड़ने की जरूरत है।

pandeyvp1960@gmail.com

चिदंबरम का बचकाना बयान

कांग्रेस के वरिष्ठ नेता पी चिदंबरम ने अनुच्छेद 370 पर अपना बयान देते हुए इसे हिंदू मुसलमान के साथ जोड़ने की कोशिश की। यह बयान उनकी मानसिकता को दर्शाता है। इससे पहले भी उन्होंने जम्मू-कश्मीर पर लोकतंत्र की हत्या होने वाला बयान दिया था, जिसकी पाकिस्तान में खूब चर्चा हुई थी। चिदंबरम जैसे नेताओं के बयानों को ना तो सरकार को और ना ही मीडिया को महत्व देना चाहिए। ऐसे नेताओं के कारण ही दुश्मन देश को भारत के आंतरिक मामलों में बोलने का मौका मिल जाता है। पी चिदंबरम जैसे नेताओं को कुछ भी बोलने से पहले अपने भीतर झांकने की जरूरत है। ऐसे नेताओं के कारण ही शायद कांग्रेस खत्म हो रही है।

विजय किशोर तिवारी, नई दिल्ली

दोहरे चरित्र वाला पाकिस्तान

पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान उनके मंत्री और नोबल पुरस्कार विजेता मलाल युसुफजई का जम्मू-कश्मीर में रह रहे मुसलमानों के प्रति प्रेम उमड़ रहा है। काश यही प्रेम पाकिस्तान में रह रहे अल्पसंख्यकों के प्रति भी उमड़ता तो लोग यही कहते कि पाकिस्तान के लोगों का नजरिया एक है। लेकिन जब देखने का नजरिया दोहरे स्तर का हो तो सवाल उठना लाजिमी है। पाक में अल्पसंख्यक समुदायों के साथ वहां की सेना और प्रशासन जिस तरह का व्यवहार करता है, वह बेहद दुखद है। लेकिन सेना के खिलाफ न तो इमरान खान और न ही मलाला की जुबान खुलती है। कम से कम अपने यहां हो रही ज्यादती पर भी उन्हें चिंता करनी चाहिए।

नीरज कुमार पाठक, नोएडा

महंगी शिक्षा का हो मूल्यांकन

सीबीएसई ने 10वीं और 12वीं की परीक्षा शुल्क प्रत्येक विषय पर 150 रुपये से बढ़ाकर 300 रुपये कर दिया हैं। पहले विद्यार्थियों के कुल विषयों का व्यय 750 रुपये था, लेकिन अब उन्हें 1500 रुपये कुल व्यय करने पड़ेंगे। अभिभावकों को पहले ही शुल्क अदा करने में कई परेशानियों का सामना करना पड़ता था, अब तो और भी ज्यादा दिक्कत होगी। सरकार को इस विषय का मूल्यांकन करना चाहिए।

विनीत, आंबे